Introduction
२

P/Th
11435

: प्राक्कथन :

शैशवकाल में प्राथमिक शिक्षा के दौरान ही कुछ विषयों के प्रति अभिरुचि स्पष्ट हो चली थी। गणित, विज्ञान जैसे विषयों की तुलना में भाषा, इतिहास, समाज शास्त्र के विषयों में मन अधिक रमता था। मेरे पिता मोहनभाई परमार प्राथमिक स्कूल में अध्यापक थे, अतः मेरी रुचि एवं अवस्था को देखकर वे प्रायः कहानियों की किताबें ले आया करते थे। पाँचवी कक्षा से सातवीं कक्षा तक कहानियों की कई किताबें मैंने पढ़ डाली थीं। इनमें लोककथाएँ, राजकुमारों एवं राजकुमारियों की कथाएँ, देवताओं की कथाएँ, रामायण-महाभारत की कथाएँ, हितोपदेश, पंचतंत्र की कथाएँ तथा ईसप की कथाएँ होती थीं। मेरी बाल-कल्पना को पंख फूटने लगे थे और मैं अपनी कल्पना की दुनिया में घण्टों खोया रहता था। कितनी प्यारी, कितनी भोली थी वह दुनिया। उसमें असमत्व या विषमत्व का विष नहीं था।

प्राथमिक शिक्षा के बाद हाईस्कूल की शिक्षा के दौरान हिन्दी-गुजराती के जो गद्य-पद्य संग्रह पढ़े और उनकी कहानियों को पढ़ा तो लगा कि ये कहानियाँ उन कहानियों से कुछ अलग प्रकार की हैं। साहित्य शब्द भी तभी सामने आया। अब समझ में आने लगा कि मेरी रुझान साहित्य की ओर अधिक है। बचपन में पढ़ी कहानियाँ और अब जो कहानियाँ हम पढ़ रहे थे उनमें तात्विक अंतर है। उसकी समझ तो बहुत बाद में बी.ए., एम.ए. में जाकर हुई। पर इतना असंदिग्ध रूप से कह सकता हूँ कि साहित्य की सभी विधाओं में कहानी की विधा मुझे विशेष रूप से आकर्षित करती रही है।

हाईस्कूल में पढ़ रहा था तभी से मन में शिक्षक होने का एक सपना अंकुरा रहा था। फलतः मैं ईश्वर से प्रार्थना करता था कि वह मुझे इतनी क्षमता प्रदान करें कि मैं साहित्य का शिक्षक बनूँ, ताकि आजीविका और अभिरुचि का मणि-कांचन योग सध सके। हाईस्कूल के दिनों से ही मेरी गति हिन्दी की ओर कुछ विशेष हो चली थी। मैंने बी.ए. की उपाधि मुख्य विषय

हिन्दी के साथ ६४ प्रतिशत अंक प्राप्त करके राजपीपला कॉलेज, दक्षिण गुजरात विश्वविद्यालय से उपलब्ध की । तत्पश्चात मैं महाराजा सयाजीराव विश्वविद्यालय में आ गया और एम.ए. की उपाधि समग्र हिन्दी के साथ प्रथम कक्षा में उत्तीर्ण की। वह सन् १९९९ का वर्ष था जो हर तरह से मेरे लिए दायाँ रहा। उसी साल मैंने 'नेट' की परीक्षा जो बहुत कठिन (tough)समझी जाती है, प्रथम प्रयत्न से ही उत्तीर्ण कर ली थी। मेरे भविष्य की दिशा मानो निश्चित हो रही थी। मेरा सपना साकार होने जा रहा था। बड़ौदा युनिवर्सिटी के कला संकाय में अध्ययन करते समय मेरा परिचय हिन्दी विभागाध्यक्ष प्रोफेसर पारुकांत देसाई जी से हुआ जिनकी शिष्यवत्सलता, छात्राभिमुखी अभिगम, विद्वता, समय-निष्ठा तथा अध्यापन कला ने मुझे उनका भक्त बना दिया। मैं अब समझने लगा था कि-

"कंटीले इस जग-वृक्ष पर सुंदर दो ही डार।
अनुशीलन साहित्य का, गुणीजनों का प्यार।।"

साहित्य के अनुराग और अनुशीलन की प्रवृत्ति विकसित हो रही थी। कुछ विभावनाएँ मन में स्पष्ट हो रही थीं। साहित्यकार के वाल्मीकिधर्म को समझने का प्रयास कर रहा था। प्रगतिवादी साहित्य के मूल्य विशेष रूप से अपनी ओर आकर्षित कर रहे थे, क्योंकि प्रारंभ से ही उनका झुकाव "दलित-विमर्श" की ओर रहा है। "काव्यमीमांसाकार" राजशेखर ने भावकों की चार कोटियाँ निर्धारित की हैं- अरोचकी, मत्सरी, सतृणाभ्यवहारी और तत्वाभिनिवेशी। इनमें श्रेष्ठ कोटि का भावक या आलोचक तत्वाभिनिवेशी" माना गया है। साहित्य का यात्री सतृणाभ्यवहारी की कोटि से निकलकर क्रमशः तत्वाभिनिवेशी की ओर संक्रमित होता है। यह मेरा निजी अनुभव है कि "तत्वाभिनिवेशी" भावक या आलोचक भी क्रमशः अपनी आंतरिक साहित्यिक-समझ(literary Conscience) के अनुरूप अपने अध्ययन के क्षेत्र-विशेष को चुनाव कर लेता है। अपने अध्यापन के दरमियान देसाई साहब जिन बिन्दुओं को स्पर्श करते थे, उनसे उतना तो समझ में आ रहा था

कि उनकी रुझान नारी-विमर्श और दलित-विमर्श की ओर अधिक थी। वह "कला कला के लिए" के नहीं, अपितु "कला जीवन के लिए" के तथा साहित्य में मुकम्मिल विचारधारा के पक्षधर थे। वह प्रायः कहा करते थे कि काव्य या साहित्य की श्रेष्ठता उसमें निरूपित दृष्टि की श्रेष्ठता पर निर्भर करता है। अतः मैंने पक्का निर्धार कर लिया कि उनके निर्देशन में ही मुझे अपना शोधकार्य करना है। अतः एम.ए. के उपरान्त एतदर्थ जब उनसे मिला तो उन्होंने कहा कि कठोर परिश्रम, अध्यवसाय तथा धैर्य की तैयारी हो तो मैं तुम्हें ले सकता हूँ, पर उसके लिए भी तुम्हें कुछ प्रतीक्षा करनी पड़ेगी। मैंने अपनी सहमति जताई। उसके बाद शुरू हुई एक शोधयात्रा। अनेक बैठकों के पश्चात् दलित-विमर्श तथा कहानी साहित्य के प्रति मेरी प्रतिश्रुतता को लक्ष्य कर हमने शोधकार्य हेतु विषयांग (Topic) का निर्धारण किया-"दलित, ईसाई और मुस्लिम संदर्भों के परिप्रेक्ष्य में शैलेश मटियानी की कहानियों का अध्ययन।" शैलेश मटियानी के उपन्यासों तथा कहानियों पर कई-कई अन्य दृष्टियों से काम हुआ है। किन्तु यह एक नया आयाम है। अतः उस पर शोधकार्य करना शोध की दिशा में एक नया कदम होगा।

उसके बाद लगभग आठ-दस बैठकों तक देसाई साहब अलग-अलग शोध-प्रबंधों को सामने रखकर उसकी प्रविधि और प्रक्रिया समझाते रहे। उसकी पारिभाषिक शब्दावली,संदर्भ (टिप्पणी) लेने और दर्शाने की विधि, उसके अपरिहार्य तत्व, शोध-प्रबंध में निष्कर्ष का महत्व, उपसंहार (Epilogue) का महत्व, उपसंहार के साधक-बाधक तत्व, ग्रंथानुक्रम (Bibliography) को देने की वैज्ञानिक विधि, उसमें पूर्णता और वैज्ञानिकता का आग्रह प्रभृति मुद्दों की चर्चा उन्होंने सोदाहरण की। वह प्रायः राल्फ मार्सटन के इस वाक्य को दोहराते हैं-"Excellence is not a skill it is an attitude" अर्थात् श्रेष्ठता कोई 'स्कील' नहीं है, वह एक प्रवृत्ति है। दूसरे शब्दों में कहें तो यदि यह आपकी प्रवृत्ति है कि किसी भी काम को तहेदिल से करना है, तो श्रेष्ठ तो उसे होना ही है।

उसके बाद उन्होंने पुस्तकालय जाकर प्रत्यक्षतः कुछ स्वीकृत शोध-प्रबंधों को सरसरी तौर पर देख जाने के लिए कहा। उनकी अपनी व्यक्तिगत लायब्रेरी भी काफी संपन्न है। उनमें से कुछ आदर्श प्रकाशित शोध-प्रबंधों को चुनकर मुझे दिया और निर्देश दिया कि इन्हें भी अपने लक्ष्य को ध्यान में रखकर देख जाओ। इन सब प्रक्रियाओं में कम से कम सवा साल गुजर गया, तब जाकर कहीं दिनांक ३०-१०-२००० को उपर्युक्त विषय को लेकर मेरा नाम पंजीकृत हुआ। इस बीच में शैलेश की लगभग सौ कहानियों को मैं पढ़ चुका था। अब शोध की दृष्टि से उनका अनुशीलन और अवगाहन करना शेष था। इस अध्ययन-यात्रा में शैलेश के लगभग १५-१६ कहानी-संग्रहों को पढ़ गया जिनमें निम्नलिखित मुख्य हैं - १. मेरी तैंतीस कहानियाँ २. बर्फ की चट्टानें, ३. बर्फ की चट्टानें (बड़ा संकलन), ४. चील ५. पापमुक्ति तथा अन्य कहानियाँ, ६. अतीत तथा अन्य कहानियाँ, ७. अहिंसा तथा अन्यकहानियाँ, ८. छिद्दा पहलवान वाली गली, ९. भविष्य तथा अन्य कहानियाँ, १०. भेडें और गडरिये, ११. सुहागिन तथा अन्य कहानियाँ तथा १२. सफर पर जाने से पहले।

कहानियों के दूसरे वाचन के बाद लेखन की प्रक्रिया शुरू की, लेकिन इसके पूर्व पुनः शोध-विधि और प्रक्रिया विषयक कुछ ग्रन्थों को देख गया, जिनमें निम्नलिखित को उल्लेख्य समझा जा सकता है-''हिन्दी अनुसंधान : स्वरूप और विकास''- प्रो. भ.ह.राजूरकर, शोध और सिद्धान्त-डॉ. नगेन्द्र, महानिबंध नुं माळखुं-पं. स्व. के.का. शास्त्री, संदर्भ-कोश-डॉ. मक्खनलाल, तथा नवीन शोध विज्ञान-डॉ. तिलकसिंह'' आदि-आदि। इस प्रकार निरंतर तीन-साढ़े तीन साल के कठोर अध्यवसाय के उपरान्त शोध-प्रबंध का लेखन-कार्य शुरू हुआ। इस शोध-कार्य के साथ -साथ में सरदार पटेल विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर विभाग में अध्यापन कार्य भी कर रहा हूँ, परिणामस्वरूप उसे प्रस्तुत करने में लगभग छः साल का समय लग गया है। अध्ययन की सुविधा तथा शोध-प्रबंध की समुपयुक्त नियोजना हेतु उसे निम्नलिखित आठ अध्यायों

में विभक्त किया गया है -

१. प्रथम अध्याय : विषय-प्रवेश

२. द्वितीय अध्याय : दलित-विमर्श विषयक कतिपय अवधारणाएँ

३. तृतीय अध्याय : ईसाई-संदर्भ तथा मुस्लिम-संदर्भ विषयक कुछ अवधारणाएँ

४. चतुर्थ अध्याय : शैलेश मटियानी की दलित-संदर्भ से युक्त कहानियाँ

५. पंचम अध्याय : शैलेश मटियानी की ईसाई-संदर्भ से युक्त कहानियाँ

६. षष्ठ अध्याय : शैलेश मटियानी की मुस्लिम-संदर्भ से युक्त कहानियाँ

७. सप्तम् अध्याय : संदर्भ-त्रयी में निरूपित मानवीय समस्याओं का आकलन

८. अष्टम् अध्याय : उपसंहार।

प्रथम अध्याय ''विषय-प्रवेश'' में विषय को प्रवर्तित करते हुए आधुनिक काल के अन्तर्गत नवजागरण की भूमिका को स्पष्ट किया गया है। नवजागरण के कारण ही दलित-विमर्श, नारी-विमर्श, सर्वधर्म समभाव जैसे महत्वपूर्ण सामाजिक मुद्दों की मुहिम छेड़ी गई थी और इस समूचे वैचारिक परिवेश को अग्रसरित करने में गद्य के आविर्भाव की एक विशेष भूमिका रही है। अतः गद्य के विकास के संदर्भ में कहानी-विधा की चर्चा यहाँ अपेक्षित है। चूँकि प्रस्तुत शोध-प्रबंध विधागत दृष्टि से कहानी से जुड़ा है, अतः बहुत संक्षेप में यहाँ कहानी के स्वरूप-विवेचन पर विचार किया गया है। इसी क्रम में कहानी की तुलना अन्य साहित्य-स्वरूपों से अर्थात् उपन्यास,नाटक,रेखाचित्र, रिपोर्ताज आदि से की गई है। कहानी की विकास-यात्रा के संदर्भ में 'इन्दुमती' से लेकर नयी कहानी तथा समकालीन कहानी तक के मर्मस्पर्शी बिन्दुओं को चिह्नित किया गया है। प्रस्तुत शोध-प्रबंध में शैलेश मटियानी की कहानियों का अध्ययन हुआ है, लिहाजा मटियानी जी के कृतित्व के काल-बोध को व्याख्यायित करने का भी एक उपक्रम रहा है। इसी अध्याय में मटियानी जी के जीवन-संघर्ष को भी उद्घाटित किया गया है। अध्याय के अंत में समग्रावलोकन की प्रक्रिया द्वारा कुछ निष्कर्षों को प्रस्तुत किया है।

प्रस्तुत शोध-प्रबंध का सरोकार दलित, ईसाई तथा मुस्लिम संदर्भों से है, अतः द्वितीय अध्याय में दलित-विमर्श से सम्बद्ध कतिपय अवधारणाओं को स्पष्ट करने का प्रयत्न हुआ है। अतः इस अध्याय में वर्णाश्रम-व्यवस्था में शूद्रों का स्थान, वर्ण-व्यवस्था के दोष, ब्राह्मणों के विशेषाधिकार, इसके विपरीत शूद्रों पर थोपी गयी निर्योग्यताएँ , अस्पृश्यों के भीतर भी जातिगत संस्तरण जैसी शातिर योजना, अस्पृश्यता का प्रारंभ कब से ?, कोचीन सरकारी रिपोर्ट, दलित-विमर्श यात्रा, दलित-विमर्श को आगे बढ़ाने वाले १९ वीं और २० वीं शताब्दी के नेता, इन सबमें डॉ. बाबा साहब आंबेडकर की भूमिका, दलित और हरिजन, अस्पृश्यता निवारण से संबद्ध कार्य, सवर्ण हिन्दुओं द्वारा चलाए गए आंदोलन, अस्पृश्य जातियों द्वारा चलाये गये आंदोलन, सरकारी प्रयत्न, संवैधानिक प्रावधान प्रभृति मुद्दों की विस्तृत एवं साधिकार चर्चा चलायी गयी है।

तृतीय अध्याय ईसाई-संदर्भ तथा मुस्लिम-संदर्भ से संबद्ध कतिपय अवधारणाओं को लेकर है। इसमें प्रथमतः हमने ईसाई-संदर्भ को लिया है। उसमें भारत में यूरोप का आगमन, अंग्रेजों का आगमन, ईसाइयत का प्रचार-प्रसार, ईसाई धर्म का उद्भव, ईसाई धर्म और बौद्ध धर्म, ईसाई धर्म की कतिपय विशेषताएँ, ईसाई परिवार, ईसाई परिवार की कुछेक विशेषताएँ, ईसाई समाज में विवाह-पद्धति, ईसाइयों में विवाह-विच्छेद ईसाई विवाह में कुछ आधुनिक नवीन परिवर्तन जैसे मुद्दों की विस्तृत चर्चा की गई है।

ईसाई धर्म की विशेषताओं में एकेश्वरवाद, ईसा मसीह में विश्वास, आत्मा की पवित्रता, त्रियकवाद, चर्च की सत्ता, धार्मिक अनुष्ठान, मूर्तिपूजा का विरोध प्रभृति की गणना कर सकते हैं, जिनकी विस्तृत चर्चा यहाँ हुई है। इसी तरह ईसाई परिवार की विशेषताओं में पितृसत्तात्मक व्यवस्था, सम्मिलित आय और संपत्ति का अभाव, परिवार का लघु आकार, परिवार में वैयक्तिकता पर विशेष जोर, समानता के सिद्धान्त पर विशेष बल, स्त्रियों की कुछ बेहतर स्थिति जैसी कतिपय विशेषताओं को रेखांकित किया गया है। ईसाई परिवार

की कुछ अन्य विशेषताओं में बाल-विवाह का अभाव, पर्दा-प्रथा का अभाव, विधवा विवाह को प्रोत्साहन, स्त्री को भी संपत्ति में अधिकार, विलंबित विवाह, कर्मकांडीय जटिलता का अभाव, दहेज-प्रथा का अनस्तित्व, विवाह-विच्छेद का प्रावधान, धार्मिक मुद्दों में भी स्त्रियों को स्वतंत्रता (यहाँ तक कि कोई स्त्री चाहे तो पादरी भी बन सकती है), स्त्रियों पर निर्योग्यताओं का अभाव आदि को परिगणित कर सकते हैं।

इसी अध्याय में मुस्लिम-संदर्भ पर भी विस्तार से विचार हुआ है। मुस्लिम-संदर्भ में विश्व में इस्लाम का उदय, इस्लाम का क्षिप्र प्रसार, अरब और इस्लाम का भारत से संपर्क, भारत पर मुस्लिम आक्रमण, भारत में मुस्लिम शासन, मुस्लिम शासन के दौरान हुए प्रभावशाली व्यक्तित्व, हिन्दू-मुस्लिम समरसता, गंगा-जमुनी संस्कृति, इस्लाम धर्म, इस्लाम धर्म की कतिपय विशेषताएँ, मुस्लिम-विवाह, मुस्लिम विवाह की कतिपय शर्तें, मुस्लिम-विवाह में महेर या स्त्री-धन का प्रावधान, मुस्लिम-विवाह के भेद, मुस्लिम-विवाह में तलाक (Divorce) का प्रावधान, तलाक के विभिन्न प्रकार या भेद, तलाक विषयक कुछ अधिनियम, मुस्लिम परिवार की विशेषताएँ जैसे मुद्दों को उकेरा गया है। भारत में मुस्लिम-शासन विषयक जो मुद्दा है उसे दो भागों में विभक्त किया गया है। सन् १२०६ से सन् १५२६ ई. तक का जो समय है उसे सल्तनत शासन का नाम दिया गया है, जिसमें गुलामवंश, खिलजी वंश, तुगलक वंश सैयदवंश और लोदीवंश वगैरह की चर्चा की गई है। सन् १५२६ से सन् १८५७ तक का जो समय है उसे मुगलकाल से अभिहित किया गया है। उसमें बाबर, हुमायूँ, अकबर, जहाँगीर, शाहजहाँ, औरंगजेब तथा उसकी उत्तराधिकारी मुगल शासकों को लिया गया है। बीच में हुमायूँ के समय कुछेक वर्ष शेरशाह सूरी का शासन रहा। शेरशाह और अकबर अपने प्रगतिवादी-प्रजाकल्याणभिमुखी सुधारों के लिए सदैव याद किये जायेंगे।

इस्लाम धर्म की विशेषताओं में एकेश्वरवाद , पैगम्बर की परंपरा, समानता और बिरादरी का सिद्धांत, मूर्तिपूजा का विरोध, पुनर्जन्म की

अवधारणा में अविश्वास, ईश्वर या खुदा के प्रति संपूर्ण समर्पण, पाँच धार्मिक कृत्य, मानवीय स्वतंत्रता में अविश्वास और ईश्वर की अधीनता में विश्वास जैसी विशेषताओं को रेखांकित कर सकते हैं। इस्लाम-निर्देशित पाँच धार्मिक कृत्यों में कलमा पढ़ना, नमाज पढ़ना, रोजा रखना, जकात देना और जिन्दगी में कम से कम एक बार हज करना जैसे कृत्यों को शामिल किया गया है। तलाक के भेदों में तलाके अहसन, तलाके हसन, तलाक-उल-बिद्दत, इला, जिहर, खुला, मुबारत, लियान और तलाके-तफ-बीज वगैरह की तफतीस के साथ चर्चा हुई है। मुस्लिम परिवार की विशेषताओं में संयुक्त परिवार-प्रथा, पुरुष प्रधान परिवार, सदस्यों की पारिवारिक स्थिति में असमानता (Disparity in the status of Family members), बहुपत्नी-प्रथा, पर्दा-प्रथा, परिवार का धार्मिक आधार, परिवार में स्त्रियों की निम्न स्थिति, परंपराओं की प्रधानता (Prominence of traditions), संस्कारों की प्रधानता (Prominence of Rites) प्रभृति विशेषताओं को देखा जा सकता है।

चतुर्थ अध्याय में दलित-संदर्भ से युक्त कहानियों का आकलन शोध के हेतु को केन्द्र में रखते हुए करने का उपक्रम रहा है। हमने यहाँ उन कहानियों को भी लिया है जिनमें भिखारियों, कोढ़ियों, फुटपाथियों के जीवन को चित्रित किया गया है। अध्ययन की सुविधा के लिए हमने इन कहानियों को दो वर्ग में विभक्त किया है- अ- कुमाऊँ के परिवेश पर आधारित कहानियाँ- इन कहानियों में घुघुतिया त्यौहार, सतजुगिया आदमी, नंगा, प्रेतमुक्ति, चिट्ठी के चार अक्षर, लाटी और लीक आदि है। इनके अतिरिक्त अन्य दलित-संदर्भ की कहानियों में सावित्री,भँवरे की जात, नेताजी की चुटिया, बर्फ की चट्टाने तथा जिबूका आदि है। ब- नगरीय परिवेश पर आधारित कहानियाँ-- इन कहानियों में चील, पत्थर, प्यास, महाभोज, गोपुली गफूरन, मिट्टी, दो दुःखों का एक सुख, एक कोप चा : दो खारी बिस्किट, हत्यारे आदि कहानियों की विस्तृत चर्चा की गई है। इनके अतिरिक्त

अहिंसा, विट्ठल, दैट माय फादर वेलजी, फर्क बस इतना है आदि कहानियों पर भी संक्षेप में विचार किया गया है। इनमें कुछ कहानियाँ मुंबई के परिवेश पर,कुछ कहानियाँ इलाहाबाद के परिवेश पर तो कुछेक कहानियाँ अल्मोड़ा के परिवेश पर आधारित है।

ईसाई-संदर्भ की कहानियों पर पंचम अध्याय में विचार हुआ है। इनमें प्रमुखतया मिसेज ग्रीनवुड, झुरमुट,दीक्षा, चुनाव, नीत्शी, छाक आदि कहानियों पर विचार किया गया है। इनके अतिरिक्त कोहरा, दैट माय फादर वेलजी, बित्ताभर सुख आदि कहानियों पर संक्षेप में दृष्टिपात किया गया है, क्योंकि इनमें भी कहीं-कहीं ईसाई पात्र मिल जाते हैं। 'झुरमुट' कहानी को कुछ संग्रहों में "कठफोड़वा" शीर्षक से भी संकलित किया गया है। इन कहानियों में हमें ईसाई परिवेश तथा ईसाई-धर्म की शब्दावली और सूक्तियाँ मिलती हैं। ईसाइयों के रीति-रिवाज, धर्मान्तरण की प्रक्रिया, धर्मान्तरण के कारणों की पड़ताल, धर्म प्रवंचना, धर्म-परिवर्तन के कारण उत्पन्न आंतरिक उहापोह, संस्कारगत समस्याएँ जैसे मुद्दों की पड़ताल भी यहाँ हुई है।

छठे अध्याय में शैलेश मटियानी जी की मुस्लिम-संदर्भ की कहानियों पर विचार-विमर्श हुआ है। यहाँ मुख्यतया मैमूद, रहमतुल्ला, इब्बूमलंग, गरीबुल्ला, पत्थर,गोपुली गफूरन, एक कोप चा : दो खारी बिस्किट,दो दुःखों का एक सुख, इल्लेस्वामी,हलाल, सिने-गीतकार आदि कहानियों को शोध-लक्ष्य को ध्यान में रखते हुए विचार-विमर्श के निकष पर चढ़ाया गया है। इन कहानियों में हमें मुस्लिम संस्कृति और सभ्यता, मुस्लिम-समाज में प्रवर्तित गरीबी, मुस्लिम-परिवेश की भाषा और बोली आदि के दर्शन होते हैं। यहाँ पर कुमाऊँ प्रदेश की छोटी जातियों की स्त्रियों में धर्म परिवर्तन क्यों हो रहा है, इनके कारणों को तलाशा और तराशा गया है।

सप्तम अध्याय में इस संदर्भ-त्रयी की कहानियों में निरूपित मानव-समस्याओं के आकलन को प्रस्तुत किया गया है। ये समस्याएँ सामाजिक, पारिवारिक , आर्थिक, धार्मिक, नैतिक, मनोवैज्ञानिक प्रकार की हैं। ऐसी

लगभग समस्याएँ हैं जिन पर यहाँ पूरी तफतीश के साथ विचार हुआ है। ये समस्याएँ हैं-१. दरिद्रता की समस्या २. जातिगत नफ़रत की समस्या ३. आवास की समस्या ४. जातिवाद की समस्या ५.धर्मान्तरण की समस्या ६. वेश्या समस्या ७. बीमारियों की समस्या ८. ज्यादा संतानों की समस्या ९. निम्न जातियों के लोगों के यौन-शोषण की समस्या १०. हैसियत से ज्यादा खर्च करने की समस्या ११. निम्नजातियों के अपमान की समस्या १२. अंध-विश्वास की समस्या १३. जाति-बिरादरी के डर की समस्या १४. बच्चों के यौन-शोषण की समस्या १५. बाल-मजदूरी की समस्या १६. बचपन में अनाथ हो जाने की समस्या १७. बच्चों से भीख मंगवाने की समस्या १८. बच्चों से अवैध काम करवाने की समस्या १९. धर्म-वंचना की समस्या और २०. अन्तर्जातीय विवाहों की समस्या आदि-आदि। ये समस्याएँ परस्पर अनुस्यूत हैं। इनके सामाजिक, धार्मिक, आर्थिक आदि कारण हो सकते हैं। इन सबकी यहाँ सोदाहरण चर्चा एवं व्याख्या प्रस्तुत है।

अंतिम अष्टम अध्याय ''उपसंहार'' का है। कई विद्वान 'उपसंहार' को अलग अध्याय नहीं मानते। उसे शोध-प्रबंध के एक परिशिष्ट के रूप में प्रस्तुत करते हैं। परन्तु यहाँ हमने 'उपसंहार' को भी एक पृथक अध्याय के रूप में दर्शाया है। मेरे निर्देशक प्रोफेसर डॉ. पारुकान्त देसाई साहब इसके प्रखर हिमायती हैं,उनका अभिमत है कि 'उपसंहार' भी एक अध्याय होता है। हालाँकि अपने कद-आकार में वह सबसे छोटा होता है, किन्तु 'छोटे हैं पर गुण बड़े' की भांति उसका महत्व अपरिहार्य है। यदि किसी ग्रन्थ यों पुस्तक में 'उपसंहार' न हो तो उसे उस विषय पर लिखा ग्रन्थ तो कह सकते हैं, किन्तु 'शोध-प्रबंध' नहीं। ''उपसंहार'' शोध-प्रबंध का एक महत्वपूर्ण अंग है। उसमें कोई नया मुद्दा नहीं उठाया जा सकता। उसमें यथासंभव संदर्भ या पादटिप्पणी भी नहीं होने चाहिए। उसमें समग्र प्रबंध के निष्कर्ष तथा सार संक्षेप को प्रस्तुत किया जाता है। यहाँ पर ही बहुत संक्षेप में विषय की उपलब्धियाँ तथा उसकी भविष्यत् संभावनाओं को संकेतित किया जाता है

और इसी प्रविधि का पालन हमने इस अध्याय में किया है।

"उपसंहार" को छोड़कर शेष सभी अध्यायों के अन्त में समग्रावलोकन की प्रविधि द्वारा उन-उन अध्यायों के निष्कर्षों को प्रस्तुत किया गया है। संदर्भानुक्रम देने की दो पद्धतियाँ प्रचलित हैं। एक में प्रत्येक पृष्ठ के नीचे एक रेखा खींचकर वहीं संदर्भ दिये जाते हैं और दूसरी पद्धति में अध्याय के अंत में उसे प्रस्तुत किया जाता है। आजकल टाइपिंग की सुविधा को लक्षित करते हुए अध्याय के अंत में उसे प्रस्तुत किया जाता है। और अधिकांश अनुसंधित्सु उसका निर्वाह करते हैं। हमने भी उसी का अनुकरण किया है। शोध-प्रबंध के अन्त में 'संदर्भिका'(Bibliography) के अंतर्गत वैज्ञानिक विधि से अकारादि क्रम से ग्रन्थानुक्रमणिका को प्रस्तुत किया गया है।

इस कार्य को मैं सुचारु रुप से अंजाम दे सका उसके पीछे अनेक महानुभावों-सज्जनों एवं सन्नारियों, विद्वानों तथा विदुषियों का प्रत्यक्ष या परोक्ष योगदान रहा है । उन सबके प्रति मैं श्रद्धावनत हूँ। प्रबंध में जिन विद्वानों एवं विदुषियों के ग्रंथों या लेखों से मैंने सहायता ली है,उन्हें बाकायदा संदर्भित किया गया है। उन सब विद्वानों एवं विदुषियों को मेरे कोटि-कोटि प्रणाम।

शोध-प्रबंध का कार्य बहुआयामी और प्रतिभा-परिश्रम साध्य होता है। उसमें धैर्य और तितिक्षा की परीक्षा होती है। अतः इस समग्र प्रक्रिया में मुझे मेरे परिवारजनों से प्रोत्साहन व प्रेरणा मिलते रहे हैं। किन्तु वे तो परिवारवाले हैं। उनका आभार मानना धृष्टता में शामिल होगा। परन्तु इस अवसर पर मैं अपने पिता मोहनभाई (निवृत्त शिक्षक) तथा मातृश्री शान्ताबेन के आशीर्वाद की कामना करता हूँ। मैं स्वयं दलित जाति से सम्बद्ध रहा हूँ। अतः मेरी शिक्षा-दीक्षा में मेरे ज़ाति-बांधव तथा अनेक दलित-गैरदलित महानुभावों की महती भूमिका रही है, उसे मैं नकार नहीं सकता। उनमें सरदार पटेल विश्वविद्यालय के हिन्दी विभाग के पूर्व अध्यक्ष प्रो. सनतकुमार व्यासजी का मैं सदैव ऋणी रहूँगा।

गुजरात के हिन्दी आचार्यगण में प्रोफेसर शिवकुमार मिश्र, प्रो. मदनगोपाल गुप्त, प्रो. अंबाशंकर नागर, प्रो. मालती दुबे, प्रो. जे.जे. त्रिवेदी, प्रो. नवनीत चौहान प्रभृति गुरुवर्यों का आशीर्वाद व मार्गदर्शन (शोधेतर शैक्षिक प्रवृत्तियों में भी) मुझे समय-समय पर मिलता रहा है, अतः उन सबके प्रति मैं अपनी हार्दिक कृतज्ञता ज्ञापित करता हूँ। मैं सरदार पटेल विश्वविद्यालय के स्नातकोत्तर हिन्दी विभाग में बतौर व्याख्याता कार्यरत हूँ, अतः इस अवसर पर मेरे सभी वरिष्ठ प्राध्यापकों का स्मरण स्वाभाविक है।

प्रस्तुत शोध-कार्य मैंने हिन्दी विभाग, बड़ौदा विश्वविद्यालय के अन्तर्गत किया है। मेरी एम.ए. की शिक्षा भी यहाँ हुई है। अतः यहाँ का हिन्दी विभाग मेरी मातृसंस्था है। विभाग के अधिकांश प्राध्यापक मेरे गुरू भी रह चुके हैं। अतः उन सबके प्रति मैं श्रद्धावनत हूँ। वर्तमान हिन्दी विभागध्यक्ष डॉ. विष्णु विराट चतुर्वेदी के प्रति भी मैं अपनी श्रद्धा व्यक्त करता हूँ। इनके अतिरिक्त वरिष्ठ रीडर डॉ. वामन अहिरे, डॉ. शैलजा भारद्वाज तथा अन्य प्राध्यापकों में डॉ. यादव, डॉ. दक्षा मिस्त्री, डॉ. शन्नो पाण्डेय, डॉ. कल्पना गवली, डॉ. कनुभाई निनामा, डॉ. माया प्रकाश पाण्डेय, डॉ. एन. एस. परमार आदि का भी मैं उनके सहयोग हेतु हृदय से आभार व्यक्त करता हूँ।

अंततः इस समग्र शोध-प्रविधि में जो सदैव मेरे साथ रहे हैं और जिनके बहुमूल्य मार्गदर्शन के अभाव में यह पर्वत-सा कार्य संपन्न नहीं हो पाता, ऐसे मेरे निर्देशक, मेरे गुरू, परम आदरणीय प्रोफेसर तथा पूर्व अध्यक्ष, हिन्दी विभाग, म.स.विश्वविद्यालय, डॉ. पारुकान्त देसाई साहब के प्रति मैं अपनी श्रद्धा और भक्ति ज्ञापित करता हूँ। उनकी शिष्यवत्सलता,दलित-प्रतिश्रुतता, ज्ञान-निष्ठा, विद्यानुराग, ग्रन्थ-संग्रह-व्यसन, पूर्णता तथा उच्च लक्ष्य का आग्रह मेरे जीवन-पथ को सदैव आलोकित करता रहेगा। उनके ऋण से उऋण होना मेरे सामर्थ्य के बाहर की वस्तु है।

पी-एच.डी. उपाधि हेतु किया जानेवाला शोधकार्य शोध-अनुसंधान और साहित्यानुशीलन के पथ पर प्रथम सोपान के रूप में होता है। कुछ-कुछ

साहित्यिक समझ विकसित होने लगती है, कुछ विभावनाएँ स्पष्ट होने लगती है और उसकी कुछ अपनी सीमाएँ और बाध्यताएँ भी होती हैं, अतः विद्या की देवी से मेरी प्रार्थना है कि मेरी यह ज्ञान-यात्रा अनवरत चलती रहे । मैं अपनी सीमाओं और सामर्थ्यहीनता से परिचित हूँ, अतः विद्वत्जनों के प्रति क्षमाप्रार्थी हूँ । मेरा यह कार्य यदि आगामी अनुसंधित्सुओं तथा अध्यताओं के मार्ग से यदि एक रोडा भी हटा सकेगा तो मैं स्वयं को कृतकृत्य समझूँगा ।

अन्त में दलित कवि कृष्ण परख की निम्नांकित काव्य-पंक्तियों के साथ विरमता हूँ-

''मनु का मकसद है, अम्बेडकर को उगने नहीं देना
अम्बेडकर का मकसद है मनु को ज्ञान देना ।
मनु का मकसद है, मैं दलितों में रोटी बांटू
अम्बेडकर का मकसद है कोई हाथ न फैलाए ।''

*

दिनाँक-०६-१२-२००६
शोध-छात्र, हिन्दी-विभाग
बड़ौदा

विनीत

हसमुखभाई मोहनभाई परमार
व्याख्याता, स्नातकोत्तर हिन्दी -
विभाग, सरदार पटेल विश्वविद्यालय,
वल्लभ विद्यानगर, आणंद (गुजरात)